RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-03
March-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

वैदिक युग और पर्यावरण चेतना

[1]डॉ0 मन्जू कोगियाल, [2]डॉ0 प्रमोद कुमार कुकरेती

[1 2]राजकीय महाविद्यालय रायपुर, देहरादून

`संसार की उत्पति और जगत का विकास ही पर्यावरण का प्रादुर्भाव है। सृष्टि का जो उद्देश्य है वही पर्यावरण का भी है। जीवन एवं पर्यावरण का अभिन्न संबंध है। यही कारण है कि मानव प्राचीन काल (आदिकाल) से ही पर्यावरण के प्रति जागरूक रहा है, ताकि मनुष्य दीर्घायुष्य, जीवन शक्ति, सुस्वास्थ्य, पशु, कीर्ति, धन एवं विज्ञान को उपलब्ध हो सके। अथर्ववेद के ऋषि इसी कामना के साथ कहता है कि–'आयुः प्राणं पशुं' (अर्थ0 19,71,1) 1 व 'शत जीव शरदो' (अर्थ03,11,4)2 वैदिक साहित्य में प्राकृतिक पदार्थों से कल्याण की कामना को स्वस्ति कहा गया है। प्राकृतिक पदार्थों में शांति की भावनाएं अनेक स्थलों पर प्राप्त होती है। पर्यावरणीय तत्वों में समन्वय होना ही सुख शांति का आधार है। दूसरे शब्दों में पदार्थों का परस्पर समन्वय ही शांति है। वेदों में सर्वप्रथम भूमि को संस्कारवान बनाने के लिए कहा गया है।

पर्यावरण शब्द आज जिस अर्थ में प्रयुक्त हो रहा है वह अर्थ अब से पूर्व चार पांच दशक पूर्व कोई पारिभाषिक अर्थ नहीं रखता था। प्राचीन कोशों तथा संस्कृत ग्रंथों में यह शब्द कहीं भी उपलब्ध नहीं होता है। इसका मूल कारण यही था कि यह शब्द 'पर्यावरण' किसी पारिभाषिक रूप में प्रचलित नहीं हो पाया था। इसी लिए प्राचीन कोशकारों ने इस शब्द का कोई विशेष अर्थ प्रस्तुत नहीं किया है। पर्यावरण शब्द की उत्पत्ति परि+ आवरण दो शब्दों से मिलकर हुयी है। पर्यावरण एक व्यापक शब्द है। यह उन समस्त शक्तियों, परिस्थितियों एवं वस्तुओं का योग है जो मानव सृष्टि को परावृत करती हैं। उनके कार्यव्यवहारों को अनुशासित तथा नियन्त्रित करती है। हमारे चारों ओर जो विराट प्राकृतिक परिवेश व्याप्त है उसे ही हम पर्यावरण कहते है। परस्परावलंबी संबंध का नाम पर्यावरण है। पर्यावरण का क्षेत्र व्यक्ति, गांव, नगर, प्रदेश, महाद्वीप अथवा सम्पूर्ण सौरमण्डल हो सकता है। इसी लिए वैदिककालीन मनीषियों ने द्युलोक से लेकर व्यक्ति तक समस्त परिवेश के लिए शांति की प्रार्थना की है–

द्यौः शांतिरन्तरिक्षं शांतिः पृथिवी शांतिरापः शांतिरोषधय शांतिः। वनस्पतयः शांतिर्विश्वेदेवाः शांतिर्ब्रह्म शांति, सर्व शांति शांतिरेव शांतिः सा मा शांतिरेधि।।3

इस लिए वैदिक काल से आज तक चिंतकों और मनीषियों द्वारा समय–समय पर पर्यावरण के प्रति अपनी चिंता को व्यक्त करते हुए मानव जाति में चेतना भरने का प्रयास किया हैं। इसके साथ ही वेद मानव जाति को प्रकृति के साथ जीवन जीने की एक ऐसी व्यापक अंतर्दष्टि प्रदान करते हैं, जिससे समस्त पर्यावरण में संतुलन स्वरूप शांति का अभीष्ट सर्व–सिद्ध बन सके। वैदिककालीन पर्यावरण चेतना को समझने के लिए सर्वप्रथम **'चेतना'** शब्द को जानना अपरिहार्य होगा।

चेतना : स्वरूप एवं परिभाषाएँ– इस संसार का सृजन जड़ व चेतन दो पदार्थों से मिलकर हुआ है। इनमें से चेतन वह तत्व है, जो उसे जड़ और निर्जीव पदार्थों से पृथक कर सजीव व चैतन्यमय बनाता है। शब्द "चेतना" बुद्धि, ज्ञान, मनोवृत्ति, स्मृति, सुधि, चेतना, होश, संज्ञा, समझना एवं विचारना आदि अर्थों में प्रयुक्त होता है। अंग्रेजी में चेतना शब्द का समानार्थी शब्द 'कांशसनेश' है, जो मस्तिष्क की जागृतावस्था किसी वस्तु के विषय में ज्ञान, जानकारी अथवा विचारों को द्योतित करता है। किसी आन्तरिक मनोवैज्ञानिक अथवा आध्यात्मिक तथ्य के प्रति आंतरिक ज्ञान की प्राप्ति 'चेतना' है। किसी बाह्य पदार्थ को आंतरिक रूप में ग्रहण करना चेतना है। विचारों, दृष्टिकोणों एवं भावनाओं का वह समूह जिसके प्रति वर्ग, समूह या व्यक्ति एक समय अथवा काल विशेष में जागरूक हो उसे 'चेतना' के अन्तर्गत लिया जा सकता है।"4

प्रो0 पारेख नेहा ने अपनी पुस्तक में 'चेतना' शब्द को कुछ इस प्रकार व्याख्यायित किया है– शब्द 'चेतना' की व्युत्पत्ति 'चित्त' धातु से हुई है, जिसका सामान्य अर्थ 'मन' है। अतः 'चेतना' का शाब्दिक अर्थ है– चित्त का विशेष भाव या चित्त की विशेष अनुभूति। चेतना शब्द मूलतः मनोविज्ञान का शब्द है।"5

'राजपाल हिन्दी शब्दकोश' में चेतना का अर्थ दिया गया है– "1. होश में आना, 2. सावधान होना, 3. सोच समझकर ध्यान देना।"6 'शिक्षक हिन्दी शब्द कोश' में चेतना का अर्थ– "1. होश में आना, 2. सावधान होना, 3. सोच समझकर ध्यान देना।"7 'आधुनिक हिन्दी शब्द कोश' में चेतना का अर्थ इस प्रकार लिखा है– "मन की वह वृत्ति जो जीवन को अंतर और बाह्य का ज्ञान कराती है। वह स्थिति जो प्राणी के चेतन होने का प्रमाण देती है। संवेदना, संज्ञा, ज्ञान, प्रतिबोध, सजीवता, बुद्धिमता, तर्कता, शक्ति चेतस।"8 'भाषा शब्दकोश' में चेतना का अर्थ दिया है– "बुद्धि, मनोवृत्ति, स्मृति (ज्ञानात्मक), सुधि, चेतनता, होश (चेत + ना प्रत्यय) संज्ञा में होना, होश में आना, सावधान या चौकस होना, विचारना, समझना "तब न चेतना केवला जब ढिग लागी बेर।"9

'बृहद् हिन्दी कोश' में चेतना से तात्पर्य है– "चैतन्य, ज्ञान, होश, याद बुद्धि, चेत, जीवन शक्ति, जीवन, बुद्धि विवेक से काम लेना, सोचना, विचारना।"10 'नालन्दा विशाल शब्द सागर' में चेतना शब्द का अर्थ दिया है– "1. बुद्धि 2. मनोवृत्ति,

RRIJM 2015, All Rights Reserved

3. ज्ञानात्मक मनोवृत्ति, 4. स्मृति, सुधि, 5. चेतना, संज्ञा, होश।"11

'हिन्दी साहित्य कोश' में चेतना का अर्थ इस प्रकार दिया गया है– "चेतना मानस की प्रमुख विशेषता है, अर्थात् वस्तुओं, विषयों व्यवहारों का ज्ञान। चेतना की परिभाषा कठिन है, परन्तु इसका वर्णन हो सकता है। चेतना की प्रमुख विशेषता है, निरन्तर परिवर्तनशीलता अथवा प्रवाह। इस प्रवाह के साथ–साथ विभिन्न अवस्थाओं में एक अविछिन्न एकता और साहचर्य। चेतना का प्रभाव हमारे अनुभव वैचित्य से प्रमाणित होता है और चेतना की अविच्छिन एकता और व्यक्ति से विभिन्न विषयों की अलग–अलग समय पर चेतना होने पर हम सदा यह भी अनुभव करते हैं कि मैंने अमुक वस्तु देखी थी, यदि हमारी चेतना अखंड और अविच्छिन्न न होती तो यह अनुभव हमें न होता। लेकिन यह अखण्डता और अविच्छिन्नता साहचर्य से सम्भव होती है। विभिन्न मानसिक प्रक्रियाओं में साहचर्य (अथवा आसंग) के द्वारा इतना घनिष्ठ बन जाती है। मानसिक संघर्ष, अत्याधिक दमन और भावात्मक आघातों से साहचर्य नष्ट भी होते जाते हैं और तब चेतना भी बिखरी–बिखरी सी हो जाती है। क्या व्यक्ति की खंडित चेतना में साहचर्य नष्ट होने की अनेक मात्रा हो सकती हैं? यदि कम मात्रा में हो तो कोई विशेष व्यवहार, कोई मानसिक क्रिया सम्पूर्ण चेतना से वियोजित हो जाती है, परन्तु व्यक्ति के लिए गम्भीर समस्या नहीं उठती। यदि अधिक मात्रा में हो तो बहुव्यक्ति खंडित व्यक्तित्व आदि रोग हो जाते हैं।''12

शब्द 'चेतना' का उपयोग प्रायः मनोवैज्ञानिक अर्थ में ही होता है, परन्तु कभी–कभी इसका प्रयोग दार्शनिक अर्थ में भी हो सकता है। विज्ञानवादी और प्रत्ययवादी दार्शनिक चेतना या विज्ञान को शाश्वत और एक मात्र सत्ता मानते हैं। इस अर्थ में 'चेतना' शब्द 'आत्मा' का समानार्थक हो जाता है। परन्तु साहित्य में और दर्शन में भी इस अर्थ में प्रायः 'चेतन्य' शब्द का उपयोग किया जाता है। चेतना शब्द सामान्य वैज्ञानिक अर्थ में ही अधिक होता है।"13

इस प्रकार चेतना शब्द के कोशगत अर्थ को देखने व समझने से स्पष्ट हो जाता है कि यह शब्द व्यक्ति को जगाने, होश में लाने, सावधान करने, चैतन्यमय होने तथा जागृति के अर्थ में प्रयुक्त होता है। शब्द 'चेतना' को विभिन्न विद्वानों ने परिभाषित किया है। डॉ. रामप्रसाद त्रिपाठी ने 'चेतना' को कुछ इस प्रकार परिभाषित किया है कि– "बोध या चेतना स्वयं को अपने आस–पास के वातावरण को समझने तथा उसकी बातों का मूल्यांकन करने की शक्ति का नाम है।"14

'चेतना' को और सूक्ष्म तरीके से व्यक्त करते हुए डॉ. पारेख नेहा लिखती हैं कि– "मानव बुद्धि प्रधान एवं संवेदनशील प्राणी है। उसे अगर कोई मच्छर भी काट लेता है तो उसकी संवेदना होते ही मानव का हाथ उसे मसल देने के लिए तुरंत आगे बढ़ता है। इस संवेदना और उसके बाद जो शक्ति मानव में कार्यरत रहती है, वही चेतना है।"15 'चेतना' के सन्दर्भ में अर्चना जैन का मत है कि– "चेतना सभी प्रकार के मानसिक अनुभवों का संग्रहालय है।"16

चेतना ही वह एक मात्र माध्यम है, जो व्यक्ति को हर उस कार्य अथवा घटना से अवगत करती है जो उसके लिए हानिप्रद तथा लाभदायक है। उसे सावधान रहने का कार्य यही चेतना करती है। चेतना ही मनुष्य को आगे बढ़ने तथा अपने अधिकारों को प्राप्त करने में एक सजग प्रहरी का कार्य करती है। बिना चेतना के मुनष्य का व्यक्तित्व सुसुप्त रहता है।चेतना के कारण ही मानव अन्य जीवधारियों से भिन्न होता है। उसकी यही चैतन्यमयी विशेषता ही उसे अन्य प्राणियों से पृथक करती है। चेतना के द्वारा ही मनुष्य अपने परिवेश में घटित होने वाली बातों को समझता है और उनका मूल्यांकन भी करता है। चेतना मानव में एक नयी शक्ति का संचार करती है।

प्रत्येक मनुष्य में चेतना की अलग–अलग मात्रा होती है किसी में अधिक भी हो सकती है और किसी में कम भी। यही कारण है कि सभी मानव में समझने व परखने की क्षमता भिन्न–भिन्न होती है। इसी के सन्दर्भ में लेखिका माधुरी लिखती हैं कि– "मनुष्य एक विचारशील प्राणी है वह वर्तमान, भूत एवं भविष्य की घटनाओं के सम्बन्ध में हमेशा चिंतन करता है। चिंतन की वृत्ति मनुष्य की स्वाभाविक वृत्ति है। इनसे अनुभव प्राप्त कर वह अपना विकास करता है। यह विकास केवल मनुष्य तक सीमित नहीं रहता, बल्कि समाज एवं राष्ट्र के विकास का कारण भी बनता है।"17

पर्यावरण चेतनाः– इस प्रकार शब्द चेतना का अर्थ अत्यंत गहन एवं व्यापक है। चेतना के विविध स्वरूप व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक स्तर पर तथा देश राष्ट्र और विश्व स्तर पर पाए जाते हैं। इस प्रकार मानव जीवन में चेतना अनेक रूपों में अंकुरित, पल्लवित और पुष्पित होती है। अपने समग्र रूप में वह सत्य, शिव और सुन्दर की कल्याणकारी शक्ति है। ऋषि मुनियों ने हजारों वर्ष पूर्व मानव जीवन के कल्याण के लिए पर्यावरण का महत्व पर बल देते हुए कहा कि प्रकृति जीवप का स्त्रोत है और पर्यावरण के समृद्ध होने पर ही मानव जीवन समृद्ध होता है। वैदिककाल में समाज में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण की रक्षा की गयी है। इसके साथ ही उनका ध्यान पर्यावरण की और आकर्षित करने का प्रयास भी किया गया है। सृष्टि के आदि से कारण भूत एवं पोषणकर्ता पांच तत्व माने गये हैं– पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि एवं आकाश। उपरोक्त समस्त तत्व मानव विकास के लिए पूर्णतः शुद्ध रूप में प्राप्त होने आवश्क हैं।

पृथ्वी को वेदों ग्रंथों में ईश्वर का स्वरूप माना गया है। भूमि की रक्षा पूजा का एक अविभाज्य अंग था। अथर्ववेद के भूमि सूक्त में ईश्वर ने यह उपदेश दिया कि अपनी मातृ भूमि के लिए मानवों में श्रृद्धा का भाव होना चाहिए। ऋग्वेद का सम्पूर्ण नवम् मण्डल अर्थात सोम सूक्त, अरण्यानी सूक्त एवं अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त इत्यादि में बार–बार एक ही सत्य से अवगत कराया गया है कि हमारी पृथ्वी हरी–भरी रहे तथा स्वास्थ्यवर्धक औषधियों, वनस्पतियों से सदा परिपूर्ण रहे, जो हमारे जिए सुखदायिनी हो–

''प्रजापतिः पृथिवी विश्वगर्भाभाषा माषारण्य नर्लणांतु,
यस्या वृक्षा वानस्पत्या ध्रुवास्तिष्ठन्ति विश्ववहाः
पृथिवी विश्वधायसं धृतामच्छावदीमसि।''18

RRIJM 2015, All Rights Reserved

पौराणिक एवं शास्त्रीय दृष्टि से देखें तो तीर्थ स्थानों में वृक्षों को देवताओं का निवास स्थान माना गया है। वट, पीपल, ऑवला, बेल, कदली, पदमवृक्ष तथा पारिजात को देव वृक्ष माना गया है। भारतवर्ष में आरम्भ से ही धार्मिक कृत्यों में वृक्ष पूजा का अत्याधिक महत्व है। पीपल(अश्वत्थ) को शुचिद्रुम, विप्र, यांत्रिक, मंगल्य, सस्थ आदि नामों से जाना जाता है। पीपल को पूज्य मानकर उसे अटल प्रारब्ध जन्य कर्मों से निवृन्ति कारक माना गया है। पीपल को सुहाग से भी संबंधित किया गया है। लोक में प्रचलित मान्यताओं के अनुरूप संतान प्राप्ति की इच्छुक नारियां उसकी पूजा अर्चना करती हैं। वैदिक दृष्टा ने पृथ्वी अंतरिक्षः–द्युलोक के लोकत्रय की अवधारणा को स्वीकार करते हुए तत्र स्थानीय प्राकृतिक शक्तियों को दिव्य एवं उपास्य माना है। 'देवी दानाद् दीपनाद् द्योतनाद वा' जो दान दें, प्रकाशित हो या प्रकाशित करें, वे देवता हैं। प्रकृति मानव को अन्न, जल, वायु, प्रकाश, ऊर्जा, आवास–आवरण आदि सभी कुछ प्रदान करती है। अतः प्रकृति का देवत्व सर्वथा सार्थक है।

वेदों के अर्थज्ञान की दुर्बोधता के बाद भी वेद–विहित पर्यावरणीय संकेतों का अवलोकन किया जा सकता है। 'वात सूक्त' में वायु से दीर्घ जीवन की प्रार्थना करते हुए उसे हृदय के लिए परम औषधि, कल्याणकारी, आनन्ददायक कहा गया है।'19

इसी प्रकार जल के महत्व को प्रतिपादित करते हुए 'जल ही जगत की प्रतिष्ठा है''20। क्योंकि जल के बिना जीवन असम्भव है। जल सब औषधियों वाला है।'21 यही कारण है कि जल के अभाव में जीवन पुष्ट एवं फलदायी नहीं हो सकता है। इस प्रकार के वर्णन ही जल के पर्यावरण संबंधी महत्व से वेदों की सुविज्ञता को दर्शाते हैं। ऋग्वेद में 'नदी–विश्वत्रि संवाद' सूक्त में मनुष्य और नदी की पारस्परिकता का वर्णन मिलता है। वेदों में नदी को अखिल चराचर जगत की जननी के पद पर प्रतिष्ठित किया गया है।''22 नदियों की यह गौरव महिमा जल संसाधनों को शुद्ध रखने का प्रभावशाली उपाय है। इसी लिए जल के समस्त स्त्रोतों की अनुकूलता की प्रार्थना मुख्यतः उल्लेखनीय है–

''शं त आपो हैमवतीः श्तामु ते सन्तूत्स्याः ।
शं ते सानिष्यदा आपः शमु ते वर्ष्याः।
शं त आपो धन्वन्याः शं ते सन्तवनूप्याः।
शं ते खनित्रिमा आपः शं याः कुम्भेभिराभृताः।23

अर्थातः–हिमाच्छादित पर्वतों, निर्झरों, वेगमय प्रवाहों, वर्षा–जल, मरूदेशीय जल, भूमि से खनित कूपों का जल, घट में संग्रहीत जल शान्तिदायक हों।

उपसंहार–वस्तुतः मानव एवं पर्यावरण सर्वथा अवियोज्य है। प्रकृति से प्रेम और उसका संरक्षण वैदिक संस्कृति की देन है। पर्यावरण के प्रति मानवमात्र की सजगता वैदिक युग से ही परिलक्षित होती है। वैदिक युगीन समस्त कार्यप्रणाली इसी चेतना का द्योतक है। वैदिक काल में जो लोक जीवन था वह प्रकृतिमय था। प्रकृति से प्रदत्त उपादानों की प्रधानता होने के कारण ग्रामीण अंचलों में भी उसकी अधिकता मिलती है। यही कारण है कि मानव अपनी प्रतिदिन की आवश्यकताओं की पूर्ति उसी माध्यम से करता था। मानव सभ्यता के विकास के साथ–साथ जैसे–जैसे उसकी आवश्यकताएं बढ़ने लगी, वैसे–वैसे वनस्पतियों का क्षेत्र भी विकसित होता चला गया। यज्ञादि में भी ऐसी सामग्री का प्रयोग किया जाता था, जिसमें कई जड़ी–बूटियां होती थी जो वातावरण को शुद्ध करती थी। अग्नि को प्रमुख कारक के रूप में माना गया है। लोक जीवन में भी यह माना जाता है कि जब किसी घर में गर्भवती स्त्री का प्रसव होता है तो ग्यारहवें या इक्कीसवें दिन उस घर में हवन किया जाता है। इसके साथ भी यही अवधारण है कि हवन आदि से गृह शुद्धि हो जायेगी।

पर्यावरण पोषण तथा प्रदूषण को दूर करने के लिए अग्नि में ही यज्ञ संभव है। यज्ञ आदि पर्यावरण में प्रदूषण को नष्ट करता है साथ ही संसार का पोषण भी करता है। यही कारण है कि प्राचीन ऋषि मुनियों ने यज्ञ को देवरथ के रूप में प्रस्तुत किया है। इसके साथ ही हजारों वर्ष पूर्व मानव जीवन के कल्याण के लिए पर्यावरण का महत्व, उसकी रक्षा, प्रकृति सहचर्य, संवेदनशीलता, रोगों के उपचार एवं स्वास्थ्य संबंधी अनेक उपयोगी तत्व निकाले थे। इस विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि वेदों में हजारों वर्ष पूर्व मनुष्य के विषय में एवं प्रकृति और पर्यावरण के विषय में जो भी कहा गया है निःसंदेह वह आज भी अत्याधिक उपयोगी एवं व्यवहारिक है। वह पर्यावरण की शुद्धता के प्रति सजग थे।

संदर्भ ग्रंथ

1–अथर्व, 19.71.1
2–अथर्व, 3.11.4
3–यजुर्वेद, 23.52
4– अथर्व,12.11.22.12
5–सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के कथा साहित्य में नारी चेतना, डॉ0 राजेश भाई पटेल, पृ0स0–173
6–ऊषा प्रियंवदा के उपन्यासों में सामाजिक चेतना, प्रो0 पारेख नेहा, पृ0स0–87
7–राजपाल हिन्दी शब्दकोश, डॉ0 हरदेव बाहरी, पृ0स0–267
8–शिक्षक हिन्दी शब्दकोश, डॉ0 हरदेव बाहरी, पृ0 स0–130
9–आधुनिक हिन्दी शब्दकोश, गोविन्द चातक, पृ0स0–211
10– सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के कथा साहित्य में नारी चेतना, डॉ0 राजेश भाई पटेल, उद्धृत अंश
11– ऊषा प्रियंवदा के उपन्यासों में सामाजिक चेतना, प्रो0 पारेख नेहा, उद्धृत अंश
12–नालंदा शब्दसागर, श्री नवल जी, पृ0 स0–388
13–हिन्दी साहित्य कोश भाग–1(पारिभाषिक शब्दावली), धीरेन्द्र वर्मा, पृ0 स0–247

RRIJM 2015, All Rights Reserved

14– ऊषा प्रियंवदा के उपन्यासों में सामाजिक चेतना, प्रो0 पारेख नेहा, उद्धृत अंश
15– महिला उनन्यासकारों की रचनाओं में चेतना का प्रवाह, माधुरी सोनटक्के, पृ0स0–14
16–वही, उद्धृत अंश
17–वही, पृ0स0–15
18–अथर्व, 12.11.12.22.12.43
19–ऋकवेद, 10.186
20–शत ब्राह्मण–6.8.2.2
(आपो वा सर्वस्य जगतः प्रतिष्ठा)
21–ऋकवेद–1.23.20
(आपश्च विश्वभेषजी)
22–ऋक–6.50.7(यूयं हिष्ठा भिषजौ मातृतमा विश्वस्य स्थातुजर्गतो जनित्रीः)
23–अथर्व, 19.2.12

RRIJM 2015, All Rights Reserved